"मध्य प्रदेश की संस्कृति में लोककला का समीक्षात्मक अध्ययन"
(मालवा के परिप्रेक्ष्य में)

डॉ सुरेश कुमार बैरागी

शोध सारांश :- हमारा देश भारत विविधताओं में एकता का देश है । यहाँ विभिन्न जातियों , धर्मों , संस्कृतियों , भाषाओं , बोलियों के लोग रहते हैं , फिर भी इन में गहरी एकता कायम है । अतः अगर भारत देश को यहाँ के लोगों को अच्छी तरह समझना है , तो यहाँ के लोगों की संस्कृतियों , रीति - रिवाजों तथा लोक साहित्य व लोककला के महत्व को समझना अव्यावश्यक है ।

भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन एवं महान संस्कृतियों में से एक है जिसमें कला का अपना एक अलग ही महत्व है । संस्कृति के द्वारा ही समाज की पहचान होती है और उनके द्वारा सम्पादित व्यवहार का दिग्दर्शन होता है । समाज के विकास एवं निर्माण में कला और संस्कृति का ही अप्रतिम योगदान रहता है । कला को मानव जीवन का हिस्सा माना गया है , जिससे वह किसी न किसी रूप में इसके साथ जुड़ा रहता है । कला प्राचीन समय से आज तक मानव को आनन्द की अनुभूति करा रही है । यह कलाएँ चित्रकलां , संगीतकलां , हस्तकलां , वस्तुकलां , नृत्यकलां , लोककलां आदि रूप में हो सकती है । शास्त्र एवं ग्रंथों में कला को जीवन की साधना तक कहा गया है ।

इसी तरह संस्कृति हर देश-प्रदेश व समुदाय की धरोहर मानी जाती है , जिसके द्वारा वहाँ के निवासियों के खान-पान , रहन-सहन , रीति-रिवाजों , मान्यताओं , संस्कारों आदि का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है , उसका अनुमान लगाया जा सकता है । मध्य प्रदेश की सांस्कृतिक धरोहर अत्यंत समृद्ध है ।

भारत के ह्रदय प्रदेश , मध्य प्रदेश का भौगोलिक दृष्टि से विस्तार 23^0-30′ से 30^0 अक्षांश उत्तर तथा 74^0-24′ से 78^0-25′ पूर्व देशांतर के मध्य है । मोटे रूप में विचार किया जाए तो दक्षिणी सीमा 22′ उत्तरी अक्षांश तक विस्तृत है।[1] सांस्कृतिक रूप से मालवा का विस्तार संपूर्ण पश्चिमी उत्तर प्रदेश सीमावर्ती पूर्वी राजस्थान और मध्य प्रदेश तक है।

मालवी भाषा से आवध्द मालवा प्रदेश में मालवी भाषा का प्रयोग मध्य प्रदेश के उज्जैन संभाग के आगर-मालवा , नीमच , मंदसौर , रतलाम , उज्जैन , देवास एवं शाजापुर जिलों इंदौर संभाग के धार , झाबुआ , अलीराजपुर , भोपाल संभाग के सीहोर , राजगढ़ , भोपाल , रायसेन एवं विदिशा जिलों , ग्वालियर संभाग के गुना जिले राजस्थान के झालावाड़ , प्रतापगढ़ , बांसवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ जिलों के सीमावर्ती क्षेत्रों में होता है ।

मालवा में साहित्यिक , सामाजिक तथा प्राकृतिक अनुकूल वातावरण के साथ ही यहाँ की लोककलाएँ भी अत्यंत समृद्ध हैं । मालवा में ग्रामीण क्षेत्र में आज भी लोककलाएँ एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं , क्योंकि आज भी मांगलिक कार्यों में विवाह अवसरों पर चित्रकारों द्वारा विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ बनवाई जाती है। तीज-त्योहारों पर माण्डना एवं वन्दनवार सजाई जाती है । दीपावली पर रंगोली , गोवर्धन पर्वत का निर्माण एवं संजा पर्व पर दीवारों पर विभिन्न गोबर की आकृतियाँ बनाई जाती है।

यहाँ के लोकगीत , लोकनृत्य , लोकनाट्य कलाएँ भी अत्यंत प्रसिद्ध है जिनमें सामाजिक जीवन मूल्यों के साथ ही मालवा अंचल की संस्कृति को भी सहजता के साथ देखा जा सकता है।

<u>कुंजी शब्द</u> :- लोककलां , संस्कृति , मालवांचल , लोकसाहित्य , समीक्षा , साहित्यिक ।

<u>प्रस्तावना</u> :- किसी भी समाज एवं समुदाय की संस्कृति का दर्पण उसका साहित्य एवं लोककलां ही होती है । लोककलां हमारी संस्कृति एवं सभ्यता का श्रृंगार है । कला का शाब्दिक अर्थ ही सुंदर है अर्थात् जो मन को प्रसन्न करती है , जिससे मानव जीवन में सुंदरता आती है । वह कला का स्वरूप है चाहे वह मानव जीवन को किसी भी रूप में प्राप्त है।

भारतीय वांड़गमय मैं लोककलां का प्रयोग प्राचीन काल से हो रहा है लोग का कोषगत शाब्दिक अर्थ स्थान विशेष , संसारजन अथवा लोकसमाज प्राणि यश आदि हैं।

किन्तु **"लोक"** शब्द की गहराई में जाने पर इसका आशय उस विशेष जनसमूह से होता है जो साज-सज्जा , सभ्यता , शिक्षा , परिष्कार आदि से कोसों दूर मनोवृत्तियों के अवशेषों से युक्त हैं जिसमें प्रकृति के नैसर्गिक सौंन्दर्य की दिव्य आभा है।[2]

लोककलां जीवन को सौंन्दर्य की अनुभूति एवं आनन्द प्रदान करने वाली कहलाती है । लोककलां से हमें आनन्द विभिन्न स्वरूपों में प्राप्त होता है । जिस प्रकार कला का अपना अलग स्थान एवं महत्व है उसी प्रकार लोककला का भी महत्व है । लोककला के माध्यम से मानव अपनी भावनाओं का अलंकरण करता है लोककला में प्रकृति का अनिवार्यत: यथावत् रूपांकन नहीं होता बल्कि यह प्रकृति में उपस्थित तथ्यों का स्वतंत्र संजन के आधार पर प्रतिरूपण करती है जो मानव के वस्तुगत प्रत्यय-बोध की पुनर्व्याख्या है।[3]

लोककला अपनी अनुभूति को उपयुक्त सहज उपलब्ध माध्यमों द्वारा मूर्त रूप में प्रस्तुत करती है । लोककला , लोकसंस्कृति , लोकविधाएँ किसी भी प्रदेश की सांस्कृतिक विरासत होती हैं । जिनके द्वारा उस क्षेत्र की विशेष पहचान परिलक्षित होती है।

भारत के मध्यप्रदेश राज्य के मालवा अंचल में लोककलाओं एवं लोकसंस्कृति का प्रभाव अधिक दिखायी देता है । भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषताओं की झलक मालवा की लोकसंस्कृति में विद्यमान है मालवा अंचल की संस्कृति भले ही विराट भारत की संस्कृति में एक लोकसंस्कृति के रूप में विद्यमान है पर फिर भी अपनी प्रकृति सौंदर्य व लोकसंस्कृति के कारण अपना अलग महत्व बना रखा है । मालवा में प्रत्येक व्रत , त्यौहार , नामकरण , विवाह , करवाचौथ , कीर्तिमास , संध्या पर्व आदि पर भूमि को अलंकरण (साज-सज्जा) रंगोली , मांडना बनाने की परम्परा है।

मालवा के संस्कृतिक वैभव , रीति-रिवाज , कलाएँ , त्योहार , लोकरंग समारोह परम्पराएँ लोकोत्सव का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :-

1. <u>संजा पर्व /संजय कला /संध्या कला</u> :- भ्रादपद माह के शुक्ल पूर्णिमा से पित्रमोक्ष अमावस्या तक श्राद्ध पक्ष में कुंआरी कन्याओं द्वारा मनाया जाने वाला संजा पर्व मालवा का प्रमुख लोक कला से आपूरित पर्व है अच्छा वर प्राप्त करने हेतु कन्याएं दीवारों पर ताजा हरे गोबर से आकृतियाँ बनाते हैं । आकृतियों को गुलतेवड़ी , कनेर , हजारी और चांदनी के फूलों से सजाया जाता है :-

- ❖ पहले दिन - पूर्णिमा का पाटला बनाते हैं ।
- ❖ दूसरे दिन - बीज अर्थात् दूज का बिजौरा बनाते हैं ।
- ❖ तीसरे दिन - घेवर बनाते हैं ।

- ❖ चौथे दिन - चौपड़ बनाते हैं ।
- ❖ पाँचवे दिन - पाँचे (तात्पर्य) पांच कुंवारे बनाए जाते हैं ।
- ❖ छठवें दिन - छाबड़ी और
- ❖ सातवें दिन - साथिया या स्वास्तिक बनाया जाता है ।
- ❖ आठवें दिन - आठ पंखूड़ी का फूल
- ❖ नवें दिन - डोकरा-डोकरी उसके बाद क्रमश: बाद बंदनावर , केल , जलेबी की जोड़ आदि बनाने के बाद तेरहवें दिन किलाकोट बनाई जाती है । जिसमें 12 दिन तक बनाई गई आकृतियाँ भी होती है ।

श्राद्ध पक्षी की समाप्ति पर ढोल-ताशे के साथ सारे समेटकर नई नवेली बन्नी की तरह संजा जी/ संध्या जी को बिदा कर दिया जाता है । मोटे तौर पर इस लोकोत्सव के तीन महत्वपूर्ण अंग है । 1. आनुष्ठानिक आयोजन 2. भिती अलंकरण कला 3. लोकगीत पर्व । न केवल भित्ति चित्रों वरन् संजा के गीतों में भी आदिशक्ति के विभिन्न रूपों पार्वती , गौरा , दुर्गा आदि की आराधना के निमित्त अंचलों मैं मालवा का संजा पर्व लोककला का अनुपम दिग्दर्शन कराता है।

Photo संझा बाई

2. <u>संजा गीत</u> :-

पेली आरती , रई रमझोल , रई रमझोल
भई रे भतीजा की अवछब जोड़
संजा थने पुंजू चंपाकलियॉ
सिंगासन मेलू सांटो , तम लो संजा बई बांटो

संझा बाई का लाड़ाजी , लूगड़ो लाया जाड़ाजी
असो कई लाया दारिका , लाता गोट किनारी का ।

संझा तू थारा घर जा कि थारी मॉ
मारेगी कि कूटेगी [4]

चांद गयो गुजरात हरणी का बड़ा-बड़ा दांत
कि छोरा-छारी डरपेगा भई डरपेगा ।

म्हारा अंगना में मेंदी को झाड़
दो-दो पत्ती चुनती थी
गाय को खिलाती थी , गाय ने दिया दूध ,
दूध की बनाई खीर
खीर खिलाई संझा को , संझा ने दिया भाई ,
भाई की हुई सगाई , सगाई से आई भाभी ,
भाभी को हुई लड़की , लड़की ने मांडी संझा
संझा सहेली बाजार में खेले बाजार में र में .....
डकराणी चाल चले , मराठी बोली बोले
संझा हेड़ो , संझा ना माथे बेड़ो ।[5]

छोटी सी गाड़ी लुढ़कती जाय
जिसमें बैठी संझा बाई सासरे जाय ....
मालवा से आई गाड़ी इन्दौर होती जाय
इसमें बैठी संझा बाई सासरे जाय ।

संझा बाई के सासरे से हाथी भी आया
घोड़ा भी आया , जा वो संझा बाई सासरिये ।[6]

संझा बाई कहती है :-

हूँ तो नी जाऊँ सासरियें

दादाजी समझाते हुए कहते है :-

हाथी हाथ बंधाऊँ , घोड़ा पाल बंधाऊँ
गाड़ी सड़क पे खड़ी जा हो संझा बाई सासरिये ।

संझा तू जिम ले , चूढ ले मैं जिमाऊँ सारीरात ,
चमक चॉदनी सी रात , फूलों भरी रे परात ,
एक फूलों घटी गयो , संझा माता रूसी गई ,
एक घड़ी , दो घड़ी , साढे तीन घड़ी ।

इस तरह घर-घर जाकर कन्याओं द्वारा संझादेवी को मनाया जाता है और प्रसाद का वितरण भी किया जाता है।

3. <u>मांडना</u> :- मांडनों का सांस्कृतिक एवं धार्मिक महत्व है । मांडने पृथ्वी , प्रकृति एवं सृष्टि के उदय से अस्त तक की कथा कहते हैं । ग्रामीण अंचलों में घर के दरवाजों के आस-पास दीवारों पर सफेद गेरू से बनी दिखाई देती है । मांडना की परंपरा सनातन काल से ही है । मांडनों में सूरज , चाँद , मयूर , हाथी , स्वास्तिक , ओम , फूल एवं पत्ती का अधिकांशतः उपयोग होता है । पुरातन समय में इन्हीं चित्रों (मांडनों) के माध्यम से ईश्वर की पूजा-अर्चना व आराधना की जाती थी । मांडना मांडने से पूर्व लोग घर की गोबर और पीली मिट्टी से लिपाई

करते हैं और अपने घर के बुजुर्गों के पूर्वजों के सिर के बालों से मांडनों को मांडते हैं ।

Photo मांडना

4. <u>लोक उत्सव एवं मेले</u> :- इनमें लो एवं उत्सवों में मालवा की संस्कृति की झलक सहज ही परिलक्षित हो जाती है । ये उत्सव सदैव मार्च से मई माह तक ही आयोजित किए जाते हैं जिससे सभी मालवा के ग्रामीणवासी इनमें आसानी से सहभागिता कर सके । क्योंकि अन्य महीनों में वह कृषि कार्य में व्यस्त होकर संलग्न रहते हैं ।

- **<u>सिंहस्थ मेला उज्जैन</u>** :- विश्व के प्रसिद्ध बारह ज्योतिर्लिंग में से एक भगवान महाकालेश्वर की नगरी उज्जैन (मालवा) में यह मेला प्रति बारह वर्षों में एक बार आयोजित किया जाता है । क्षिप्रा नदी के तट पर यहां विश्वप्रसिद्ध मेला अपनी पूर्ण भव्यता के साथ आयोजित होता है । जिसमें दुनिया भर के लाखों लोग आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करने व यहाँ की संस्कृति को जानने हेतु एकत्रित होते हैं।

Photo

- **<u>कालूजी महाराज का मेला</u>** :- पश्चिमी निमाड़ के छोटे से ग्राम पिपल्याखुर्द में एक महीने तक यह मेला लगता है । लगभग 100 वर्षों पहले कालूजी महाराज अपने आध्यात्मिक शक्ति से यहाँ इंसानों एवं पशुओं की विभिन्न बीमारियों को

ठीक किया करते थे । उन्हीं की याद में यह परम्परा के रूप में मेला लगाया जाता है । लोग पूरी आस्था के साथ इस मेले का आनंद लेते हैं ।

- **<u>बाबा बदखशाहनी का मेला /उर्स राजगढ़ (ब्यावरा)</u>** :- मालवा अंचल के जिला मुख्यालय राजगढ़ (ब्यावरा) में यह मेला 10 मार्च से प्रारंभ होकर लगभग एक माह तक आयोजित होता है । बड़ी संख्या में विभिन्न धर्मों के लोग इस मेले में पहुंचते हैं ।
- **<u>लोकरंग समारोह</u>** :- यह मालवा की आदिवासी लोककला अकादमी द्वारा आयोजित एक सांस्कृतिक प्रदर्शनी है , जिसमें जनजातीय संस्कृति की लोककलाओं उनके नृत्य आदि का प्रदर्शन किया जाकर जनजातीय संस्कृति का दिग्दर्शन कराया जाता है ।

Photo

- **<u>भगोरिया उत्सव</u>** :- मालवा क्षेत्र के भील समुदाय का यह प्रमुख पर्व है जो कि फागुन माह में आयोजित किया जाता है । यह पर्व धार , झाबुआ , खरगोन आदि के आदिवासी इलाकों में प्रमुखता से धूम-धाम से मनाया जाता है । इस अवसर पर आदिवासी भील युवक-युवतियों को अपने जीवन-साथी चुनने का अवसर प्राप्त होता है । लड़का लड़की को पान खाने हेतु देता है , यदि लड़की पान खा ले तो हाँ समझी जाती है । इसके बाद लड़का लड़की को भगोरिया हाट से लेकर भाग जाता है । हाट या मेले के दिन बुजुर्ग डेरे में रहते हैं और अविवाहित युवक-युवती हाथ में गुलाब और गुलाल लेकर घूमते हैं । जब कोई युवक लड़की के माथे पर गुलाल लगा देता है और प्रत्युत्तर में लड़की लड़के के माथे पर गुलाल लगा देती है तो यह समझा जाता है कि दोनों एक दूसरे को जीवनसाथी बनाना चाहते हैं ।

इस तरह यदि लड़का लड़की के गाल पर गुलाबी रंग लगा दे और जवाब में लड़की भी रंग लगा दे तो भी रिश्ता तय माना जाता है ।

Photo

- **<u>नीरजा</u>** :- यह उत्सव महिलाओं द्वारा नवरात्रि में नौ दिनों तक मनाया जाता है जिसमें दुर्गा मैया की पूजा व आराधना की जाती है । मालवांचल के कुछ क्षेत्रों में गुजरात के गरबा उत्सव को ही स्थानीय विशेषताओं के साथ मनाया जाता है जिसमें मालवा की झलक दिखाई देती है।

5. <u>स्थापव्य कलाएँ</u> :-

- **<u>काष्ठ शिल्प</u>** :- काष्ठ शिल्प के रूप में गाड़ी के पहिए , घर के दरवाजे , देवी-देवताओं की मूर्ति आदि बनाई जाती है।
- **<u>कंधी शिल्प</u>** :- कंधी बनाने का श्रेय बंजारा जनजाति को है । कांधी निर्माण के क्षेत्र उज्जैन , रतलाम एवं नीमच हैं । आदिवासियों द्वारा कंधी पर गोदना भित्ति चित्रों का निर्माण किया जाता है ।
- **<u>छीपा शिल्प</u>** :- यह हाथ से कपड़े पर बनाया जाता है , जिसमें भील आदिवासियों के विभिन्न जातीय प्रतीको का समावेश होता है । बाघ , कुक्षी , मनावर , उज्जैन , छीपा शिल्प के प्रमुख केंद्र हैं । उज्जैन के छीपा शिल्प को भेरूगढ़ के नाम से देश एवं विदेशों में जाना जाता है ।
- **<u>लाख शिल्प</u>** :- मध्यप्रदेश में उज्जैन , इंदौर , रतलाम , मंदसौर लाख शिल्प के परम्परागत केंद्र हैं । प्रदेश में लखार जनजाति द्वारा लाख के चूड़े , कलात्मक खिलौने , श्रंगार पेटियाँ अलंकृत पशु-पक्षी , डिब्बीयों एवं अनेक कलात्मक वस्तुएं बनाई जाती है ।
- **<u>प्रस्तर शिल्प</u>** :- प्रस्तर शिल्प का विकास मंदसौर एवं रतलाम जिले में हुआ है इन जिलों में गुर्जर , गायुटी , जाट और भील जातियों द्वारा पत्थरों से मूर्तियाँ सौंदर्यात्मक एवं दैनिक उपयोग की वस्तुएं बनाई जाती है ।

- **<u>मिट्टी शिल्प</u>** :- मिट्टी शिल्प का कार्य मालवा अंचल में प्रमुखत: झबुआ मंडला के कुम्हारों द्वारा विशेष रूप से किया जाता है । सामान्यतः मालवा के प्रत्येक क्षेत्र में मिट्टी के मटके ,सुराही , गमले , तवा आदि बनाए जाते हैं।
- **<u>तीर धनुष कला</u>** :- भील , पहाड़ी , कोरबा , कमार आदि जनजातियों द्वारा तीर धनुष का निर्माण मोरपंख , लकड़ी , लोहा , रस्सी आदि से बनाए जाते हैं।
- **<u>बांस शिल्प</u>** :- प्रमुख केंद्र झाबुआ एवं मंडला है , लेकिन सामान्यत: मालवा अंचल में बांस की टोकरियॉ , फाटक , खिलौने , कुर्सियाँ आदि बनाई जाती है।
- **<u>पत्ता शिल्प</u>** :- पेड़ के पत्तों (विशेषता खजूर के पत्तों) से खिलौने , चटाई , दूल्हा-दुल्हन के मोढ़े , झाड़ आदि बनाए जाते हैं । ये कार्य मुख्यत: मोग्या आदिवासी लोगों द्वारा किया जाता है :-

6. <u>लोक नृत्य</u> :-

- **<u>भगोरिया नृत्य</u>** :- भीलों द्वारा मुख्यत: फागुन उत्सव पर किया जाता है । यह भी लो द्वारा किया जाने वाला नृत्य है ।
- **<u>मटकी नृत्य</u>** :- यह मालवांचल का एकल नृत्य है ।
- **<u>आल्हा अखाड़ा राजबाड़ी नृत्य</u>** :- यह भी मालवा के प्रमुख नृत्य है ।
- **<u>डण्डा नाच</u>** :- photo

7. <u>माच</u> :- यह मालवा का प्रमुख लोकनाट्य रूप है । इसको प्रसिद्धि उज्जैन से ही मिली है । माच शब्द के अनेक परिवर्तित रूप विभिन्न क्षेत्रों में मिलते हैं । माचा , मचली , माचली , माच , मचैली , मचान जैसे कई शब्दों का तात्पर्य मंच के समानार्थी भाव बोध को ही व्यक्त करता है ।

माच के मंच और मचान मैं भी पर्याप्त सभ्य रहा है । पुराने दौर में माच का मंच इतना अधिक ऊँचा बनाया जाता था कि उसके नीचे से बैलगाड़ी भी गुजर जाती थी। इन दिनों में मंच की ऊंचाई प्रातः सामान्यता ही रहती है ।[7]

इन प्रदर्शनों में प्रमुख तत्व संगीत भी है और हिंदुस्तानी शास्त्रीय रागों से बड़े पैमाने पर शब्द और धुनों के साथ खींचा जाता है , जिसमें उस मौसम या अवसर की दर्शाया जाता है जिस पर नाटक का मंचन किया जाता है ।[8]

सारंगी , हारमोनियम और ढोल से आम संगत होती है ।[9]

गुरु गोपाल जी , गुरु बालमुकुंद जी , भागीरथ पटेल , गुरु रामकिशन जी ने माच के खेलों की रचना की और उसके मंचन की परम्परा को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है ।

गुरु बालमुकुंद जी ने कृष्णलीला , सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र , भारती-पिंगला , ढोला मारू , देवर भौजाई , सुदबुद सालेगा , सेठ सेठानी और गेंदापरी जिनमें से 10 खेलों का प्रकाशन हो चुका है ।

गुरु राधाकिशन जी ने - मधुमालती , पुष्पसेन , कुंवर रिसालू , ठाकुर - ठकुराइन और बादशाह हजारी ।

इन खेलों में कहीं मानव मत सुकोमल भावनाओं का चित्रण है तो कहीं साहसी एवं वीर चरित्रों का , कहीं आध्यात्मिकता और धर्म का चित्रण है तो कहीं समसामयिक समस्याओं का , आलोचनात्मक चित्रण और उनके समाधान का प्रयास दिखाया जाता है ।

Photo

<u>कलगी तुर्रा कला</u> :- यहा स्वांग एवं कड़ गायन की कला है । इसमें कलगी और तुर्रा दो पक्ष होकर कलगी पक्ष शक्ति और तुर्रा ब्रह्मा का प्रतीक है । दोनों ही पक्षों द्वारा व्यंग्यात्मक तरीके से तरह-तरह के स्वांग गाए जाता है । पहले होली कि दूज , रंग पंचमी तथा गणगौर पर्व पर स्वांग गायन होता था लेकिन आजकल मात्र होली की दूज पर सिरोंज में यह आयोजन प्रमुखता से होता है।

कलगी पक्षी के स्वांग गायन में मोतीनाथ , सुनकीनाथ , धन्नानाथ तथा रामनारायण भार्गव आहिर थे । इस तरह तुर्रा स्वांग गायन में हरिनारायण भार्गव , बाबूलाल श्रीवास्तव चर्चित नाम रहे हैं । लक्ष्मीचंद महावीर (शिक्षक) , कमलरलाल , खेमचंद , मनोज जोशी , कुंदन जोशी , बाबूलाल विश्वकर्मा , कुंदननाथ , रामस्वरूप राव तथा मनोज सेन द्वारा वर्तमान में स्वांग गायन किया जाता है।

<u>ढारा - ढारी के खेल की कला</u> :- मालवांचल एवं राजस्थान में ढारी जाती के लोग कृष्ण के जीवन चरित्र की अभिनयात्मक प्रस्तुति कर अपने जीवन का निर्वाह कर रहे हैं । ऊंचे चबूतरे पर दरी बिछाकर ढारा - ढारी का खेल किया जाता है ।

<u>स्वांग प्रदर्शन</u> :- अभिनय दास परिहास चुटीले व्यंग्य एवं जनमनोरंजन हेतु तत्व जुटाकर कर माच गुरुओं ने लोक के इस अद्भुत रूप का विकास किया । डॉ शिवकुमार माथुर अनुसार ढारा - ढारी के खेलों से अभिनय , गरबा उत्सव से संगीत , तुर्रा कलगी से गायन एवं स्वांग नकल प्रदर्शनों से अभिनय हास परिहास द्वारा गुरुओं ने माच को सम्मिलित लोकनाट्य रूप में विकसित किया है।

8. <u>लोक गीत कला</u> :- मालवा में अनेक तीज त्योहार मनाएँ जाते हैं । रामनवमी , दशहरा , दीपावली , होली , संक्रांति , गणेश चतुर्थी , करवा चौथ आदि प्रमुख

त्योहारों के साथ ही नाग पंचमी , शीतला सप्तमी , गंगा दशहरा , देव शयनी ग्यारस , देवउठनी ग्यारस , वैशाख पूर्णिमा , गणगौर व्रत आदि मनाएँ जाते हैं।

विभिन्न पर्वों में तरह-तरह की परम्पराओं व रीति-रिवाजों का पालन किया जाता है । विभिन्न अवसरों पर विभिन्न तरह के लोग गीतों का गाया जाता है :-

(i) <u>त्योहारों पर गणेश पूजन का गीत</u> :-

कई रेती में पीपल छाया कहीं गिरा कुंडा खड़ा या हो म्हारो घेरा

गजानंद आया कई दाऊजी रे मन भाया....

(ii) <u>दामाद जी के आने पर गीत</u> :-

मौजा पैरों मौजा पैरों मौजा पैरों राजा

मौजा ऊपर मेहंदी साए किरण जी चितिराई

हो म्हारा रंगीला जमाई खाने वाला गांव

राज गाल गावां , गीत गावां ....

(iii) <u>बानो (गांव में आई बारात को निमंत्रित) करने पर</u> :-

ऊना सा पाणी ठंडा वई रया रे

रामदेवजी रुणीजा में रे ....

(iv) <u>कुंकड़ा (प्रभाती)</u> :- विवाह अवसर पर प्रात: काल में गया जाता है -

सूरज ऊगो हो , केवड़ा के री परत ग्यानो
रजाम सुहावनो तम जागो हो

सूरज जी हो राम तम जागो हो .....
सूरज ऊग्यो .... सूरज ऊग्यो ....

(v) <u>भेरू (भैरव के गीत)</u> :-

ससरा अबोले , सासु अबोले
किनी पत मंदरिया , आवां हो जेठ अबोले .....

(vi) <u>एकादशी के गती</u> :-

एकादसी करना
राजा ब्रह्मा आगे साक्षी मरना
पेली निरजला , दूसरी सिरजला

(vii) <u>मेंहदी (विवाह अवसर पर) गीत</u> :-

मेंदी तो आई टोडा देस से
केसरिया हो राज .....

(viii) <u>बेटी की विदाई का गीत</u> :-

धड़ी एक धोड़ीलो , थो बजे रे सायब
बनड़ा दाऊजी से मिलवा दो रे ....

(ix) <u>बधावा (ईश्वराधना) के गीत</u> :-

म्हारा अगवाड़े आम्बे मोरियो
पिधवाड़े है छाई राजा ....
ग जबेल बधांवोजी म्हें सुण्यो ....

(x) <u>गाली (व्याईजी के आने पर) गीत</u> :-

आईजा म्हारी समदण लिम्ब तले

दारी बिछिया पेरे , लिम्ब तले थारी
अनबट री , झलक बेतई जा म्हारे ...

इसके अतिरिक्त दादरा , राग हूलर , नणदोई के आने पर , गंगा माता , सरोता , साध , ढोल्यो (पलंग) कौल्या (कौर) गीत , बीरो (भाई) , जच्चा , सावनी झूला , चीगट , सुहाग का गीत , जलवायु पूजन , चौक के बधावा समदेले के उबटन (हल्दी लगाने) आदि अवसरों पर मालवा के लोकगीत बड़े उत्साह के साथ महिलाओं के द्वारा गाए जाते हैं ।

<u>निष्कर्ष</u> :- इस प्रकार स्पष्ट है कि मालवा लोककलाओं से आपूरित प्रदेश है जिसमें लोकमानस , लोकजीवन व लोकव्यवहार की छटा का दिग्दर्शन सहज ही हो जाता है । लोककला में अभिव्यक्ति के आकार परम्परा से बंधे होते हैं । लोककला में स्वाभाविकता व सहजता अनिवार्य गुण हैं , जिनमें अनुष्ठान भी सन्निहित रहते हैं । यह अनूष्ठान परम्पराओं , धार्मिक मान्यताओं से सम्बद्ध होते हैं । इसलिए यह जनसामान्य हेतु सहज व प्रिय होते हैं । लोककला , लोकगीत , लोकनृत्य , लोकसंगीत , लोकनाट्य , लोकजीवन को नवीन चेतना प्रदान करने के साथ-साथ लोगरंजन के सरल सुलभ साव्य हैं । अब मानव शास्त्रीय कला के बंधनों से मुक्ति पाने के लिए लोक-कलाओं की ओर आकर्षित हो रहे हैं । लोक-कलाओं के प्रति विश्व के सभी देशों में नवीन अभिरुचि उत्पन्न हो रही है ।[10]

नैसर्गिक प्रवाह , सहज अभिव्यक्ति , जटिलता से परे सरलीकृत रूपों द्वारा मालवी कला अनुपम सौंदर्य की सृष्टि करती है । जिसमें अभिप्रियों के साथ जन - जन की भावनाएं और विश्वास धरोहर के रूप में सुरक्षित है और ये अभिप्राय इस

कला के माध्यम से जीवन की कलात्मक गति को निरंतरता प्रदान करते हैं । इस लोककलाओं का संरक्षण अत्यावश्यक है क्योंकि इन्हीं के द्वारा मालवीय संस्कृति का दिग्दर्शन परिलक्षित होता है।

<u>संदर्भ ग्रंथ</u> :-

1. मालवीय साहित्य का इतिहास : साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद भोपाल, पृष्ठ - 13

2. गुप्ता डॉ नीलिमा : भारतीय लोककला (छत्तीसगढ़ के संदर्भ में), पृष्ठ संख्या - 32 , स्वाति पब्लिकेशन दिल्ली

3. चतुर्वेदी डॉ मंजुला : भारतीय लोककला के अभिप्राय, पृष्ठ संख्या 35 कला प्रकाशन , बी. एच. यू. , वाराणसी

4. https://m hindi.webdunia.com/other-festivals/sanja-ieet

5. वही

6. वही

7. शर्मा शैलेंद्र कुमार : मालवा का लोकनाट्य माच और अन्य विधाएं , उज्जैन , अंकुर मंच , पृष्ठ स. 6 से 18

8. भारत के पारंपरिक थिएटर रूपों सांस्कृतिक संसाधन और प्रशिक्षण केंद्र - 15 मई 2013 मूल से संग्रहित

9. मध्य प्रदेश की नृत्य परंपराएं - 22 अगस्त 2013 मूल से संग्रहित

10. भार्गव डॉक्टर सरोज : सौंदर्य बोध एवं ललित कलाएं , पृष्ठ संख्या - 49 से 50 , कला प्रकाशन बी-33/ 35 ए-1 , न्यू साकेत कॉलोनी , वाराणसी (1999)